International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
July –August 2017, Volume-4, Issue-4
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

धर्म का मूल स्वरूप

डॉ. (श्रीमती) राजेश्वरी मीना
दर्शनशास्त्र विभाग, एम.एस.जे. राजकीय स्नोतकोत्तर, महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

शोध सार – धर्म किसी–न–किसी प्रकार की अतिमानवीय या अलौकिक पर विश्वास है जिसका आधार भय, श्रद्धा, भक्ति और पवित्रता की धारणा है और जिसकी अभिव्यक्ति प्रार्थना, पूजा या आराधना आदि के रूप में की जाती है। प्रस्तुत शोध आलेख में धर्म के मौलिक स्वरूप का दार्शनिक विश्लेषण किया गया है।

मुख्य–शब्द : चेतना , संवेदना , अनुभूति, नैतिकता, आध्यात्मिक संकल्प शक्ति

धर्म शब्द संस्कृत के 'धृञ् धारणे' धातु से मन् प्रत्यय करके बना है जिसका अर्थ है जो स्वयं सबको धारण कर पोषण करता है। अथवा वह जो धारण करने योग्य है जिसे धारण किया जाय वही धर्म है– धारणाद्धर्ममित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः। धर्म की परिभाषा करते हुए कणाद कहते हैं– ''यतोऽभ्युदयः निःश्रेयस् सिद्धिः स धर्मः''1 अर्थात् जिसके धारण करने से व्यक्ति और समाज का अभ्युदय हो और जीवन का श्रेष्ठतम प्राप्तव्य प्राप्त हो सके वह धर्म है। सबका यह सामान्य अनुभव है कि क्षुधा, तृष्णा, सुख, दुःख, हम सब अलग–अलग अनुभव करते हैं। किसी की तृष्णा या क्षुधा की शान्ति उसके स्वयं के पानी पीने या भोजन करने से ही होती है किसी अन्य के नहीं। ठंडी में ठिठुरते व्यक्ति की ठंड किसी और के गर्म कपड़े में होने से नहीं जाती जब तक स्वयं वह गर्म कपड़े न पहने। शरीर के तल पर यहाँ स्पष्ट अलग–अलग चेतना की अनुभूति होती है। कुछ ऐसा है, जो सर्वत्र है सबके आर–पार है। सब में है और मेरे भी हैं। अथवा जिसके होने से मुझे संवेदनाओं की अनुभूति होती है यही है व्यावहारिक धर्म।

वेदों में दो प्रकार की इसी चेतनात्मक अनुभूति को शरीर के तल पर व्यक्ति और समग्र के तल पर समष्टि की दृष्टि से, जीवात्मा और परमात्मा कहा गया है। तथ्यतः करुणा, दया, सहयोग प्रेम, रक्षा, सहायता, इस चेतनात्मक संवेदना के कारण ही है। चूँकि यह संवेदनात्मक चेतना ही (वेदों के अनुसार परमात्म चेतना ही) समाज भावना की जननी या धारक है। बिना इस चेतना के किसी उन्नत समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वास्तव में करुणा, दया, प्रेम, सहयोग, संरक्षा जिस चेतना पर आधारित हैं जो चेतना हमें अन्याय, अपराध, शोषण का विरोध करने को प्रेरित करती है वह परमात्म चेतना ही धर्म है। जबसे जीवन चेतना है तभी से धर्म है। या यो कहें कि धर्म ने ही इस जीवन चेतना को धारण कर रखा है। श्रुति के शब्दों में–

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः।
भूतेषु भूतेषु विचित्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति।।[2]

जिसने यहाँ इस लोक में ही इस परमात्मा का अनुभव कर लिया उसने जीवनसत्य को प्राप्त कर लिया, यदि यहाँ नहीं प्राप्त किया तो उसका जीवन व्यर्थ हो गया। प्राणी–प्राणी में विशिष्ट रूप से व्याप्त चेतना का अनुभव करता हुआ उस अमृत को प्राप्त कर लेता है, जो इस लोक में है और इस लोक के पार भी है। इस संबंध में एक वेदमंत्र और भी–

यस्मिन् सर्वाणि भूतानि, आत्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं, ततो न बिजुगुप्सते।।[3]

जो सभी प्राणियों को अपने में देखता है और सभी प्राणियों में अपने को देखता है तब वह किसी की निन्दा नहीं करता है। इस प्रकार धर्म व्यक्ति का जीवन है और धर्म ही राष्ट्र का और समाज का प्राण है। धार्मिक चेतना में ही उद्‌गार फूटता है।

'संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।[4]

इसीलिए श्रुति ने इस मानवता की समष्टि के लिए, सम्पूर्ण समाज की नैतिक रक्षा के करने के कारण इस धर्म को ही सबसे श्रेष्ठ, समाज की आन्तरिक शक्तिरूप शासक होने से शासकों का भी शासक माना है। श्रुति के शब्दों में–

स नैव व्यभवत् तच्छ्रेयोरूपमत्यसृजत धर्मम्।
तदेतत्क्षत्रस्य क्षत्रं यद्धर्मः।
तस्माद् धर्मात् परं नास्ति।
अथो अवलीयान्बलीयान् समाशंसते धर्मेण यथा राज्ञैवम्।
यो वै स धर्मः सत्यम् वैतत्।
तस्मात् सत्यं वदन्तमाहुर्धर्मं वदतीति। धर्मं वावदन्तं सत्यमवदतीति।[5]

अर्थात् परमात्म चेतना का अनुभव करने वाला समस्त मानव को समाज के परम वैभव तक ले जाने के इच्छुक ज्ञानी समुदाय, ऋषि समुदाय विविधात्मक अजीविका कर्मों की सुव्यवस्था करने के बाद भी जब अपेक्षित वैभव को प्राप्त न कर सका तब उसने इस मानवता के श्रेष्ठतम रूप धर्म की रचना किया। वह यह धर्म शासक का भी शासक है। इसलिए धर्म से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है। इसीलिए धार्मिक जीवन जीने वाला कमजोर व्यक्ति भी बहुत बलवान् वैसे ही होता है, जैसे राजा का आत्मीय गरीब आदमी भी बहुत शक्तिशाली होता है। जो यह धर्म है यह ही सत्य है। इसीलिए सत्य बोलने वाले को कहते हैं कि यह धर्म पर चलता है और धर्म पर चलने वाले कहते हैं कि यह सत्य बोलता है। इसीलिए यह दोनों सत्य और धर्म संयुक्त हैं, क्योंकि दोनों मूलतः परमात्म चेतना में संयुक्त हैं।

भगवान् राम के जीवन में इसका स्पष्ट दर्शन होता है। तभी तो महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं– ''रामो विग्रहवान् धर्म''[6]
राम मूर्तिमान् धर्म है।

वाल्मीकि के शब्दों में–

तपस्वीनां रणेशत्रून्, हन्तुमिच्छामि राक्षसान्।
पश्यन्तु ऋृषयः वीर्यं सभ्रातुर्मे तपोधनाः।[7]

अर्थात् हे मुनिजन! तपस्वियों के शत्रु राक्षसों को मारना चाहता हूँ। हे तपोधनों! भाई के सहित आप मेरी इस धार्मिक संकल्प शक्ति का दर्शन करें। इस प्रकार राम ने अपनी आध्यात्मिक संकल्प शक्ति से यह प्रतिज्ञा कर ली। दूसरे दिन वे सीता लक्ष्मण के साथ सशस्त्र ऋषियों के आश्रमों के भ्रमण के लिए चले तो सीता ने उनकी प्रतिज्ञा पर संवेदनात्मक, वैचारिक एवं धार्मिक प्रश्न उठाये।

वाल्मीकि के शब्दों में–

वुद्धिर्वैरं बिना हन्तुं राक्षसान् दण्डकाश्रितान्।
अपराधं बिना हन्तुं लोको वीरं न मन्यते।।[8]

बिना शत्रुता के और बिना विचार किये दण्डकारण्य में रहने वाले राक्षसों की मारने की प्रतिज्ञा उचित नहीं है। बिना किसी अपराध के किसी को मारना वीरता और धर्म नहीं है। ऐसा लगता है कि बहुत समय से ऋषियों के साथ रहने के कारण आपको इन ऋषियों के प्रति मोह हो गया है। उसी मोह से ग्रस्त होकर आपने निरपराध राक्षसों को मार डालने की प्रतिज्ञा कर ली है। यदि ऐसा है तो आपको इस अधार्मिक प्रतिज्ञा का परित्याग कर देना चाहिए, क्योंकि धर्म ही सर्वश्रेष्ठ है और यदि ऐसा नहीं है और आपकी प्रतिभा धर्मनिष्ठ है तो मुझे समझायें कि वह कैसे है। जिस पर राम ने सीता से कहा कि सीता आपने स्वयं कहा कि–

संश्रुत्य न सक्ष्यामि जीवमनः प्रतिश्रवम्।
मुनीनामन्यथा कर्तुं सत्यमिष्टं हि में सदा।।[9]

अर्थात– हे सीता! भलीभाँति विचार कर की गई अपनी इस प्रतिज्ञा को मैं जीते जी बदल नहीं सकता हूँ। वह भी मुनियों के विषय में जिन्हें मैंने भली भाँति जाना समझा है। सीता मुझे सदा सत्य धर्म इष्ट है। जहाँ सत्य है धर्म है वहाँ राम है। इससे स्पष्ट है कि धर्म संवेदनाओं में है। करुणा में है। दया में है। समाज की संरक्षा में है नैतिकता में है। सम्पूर्ण लोक के हित चिन्तन में है। तभी तो महर्षि कणाद कहते हैं–

''यतोऽभ्युदयः निःश्रेयस् सिद्धिः स धर्मः।''[10]

जिससे समाज का उदय हो, और श्रेष्ठतम की प्राप्ति हो वह धर्म है। तभी तो श्रुति उद्घोष करती है–

''धर्मात् परं नास्ति।'' (धर्म से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं।)[11]

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1. वैशेषिक सूत्र 1ध्3
2. केनोपनिषद्
3. यजुर्वेद माध्यन्दिन संहिता 40–6
4. ऋग्वेद संज्ञान सूक्त दशम मण्डल की पूर्णता
5. शतपथ ब्राह्मण 14ध्4ध्2ध्26, बृहदारण्यकोपनिषद् 1ध्4ध्14
6. वाल्मीकि रामायण
7. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 6ध्25।।
8. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 9–25
9. वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड 10–17
10. वैशेषिक सूत्र 1–3
11. शतपथ ब्राह्मण 14–4–2–26